उत्तराखंड उच्च न्यायालय
25 जनवरी, 2021 को हर मोहिंदर पाल सिंह बनाम राजेंद्र पाल सिंह
निर्णय सुरक्षित रखा

उत्तराखंड के उच्च न्यायालय, नैनीताल में

2019 का सिविल पुनरीक्षण क्रमांक 8

हर मोहिंदर पाल सिंह पुत्र स्वर्गीय सरदार इंदर सिंह,
निवासी 28 (45, 45/1) मालवीय रोड, लक्ष्मण चौक,
देहरादून
....संशोधनवादी

बनाम

राजेंद्र पाल सिंह पुत्र स्वर्गीय सरदार बचन सिंह
निवासी-मालवीय रोड, लक्ष्मण चौक, देहरादून

.... प्रतिवादी

सलाह:
श्री पूरण सिंह रावत, पुनरीक्षणकर्ता के अधिवक्ता
श्री आदित्य सिंह, प्रतिवादी के वकील

प्रलय

माननीय लोक पाल सिंह, जे.

प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम, 1887 (जिसे इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित किया जाएगा) की धारा 25 के तहत यह नागरिक पुनरीक्षण, एससीसी में न्यायाधीश, एससीसी/प्रथम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, देहरादून द्वारा पारित दिनांक 08.01.2019 के फैसले और डिक्री के खिलाफ निर्देशित है । 2012 का मुकदमा संख्या 03 हर मोहिंदर पाल सिंह बनाम राजेंद्र पाल सिंह , जिसके तहत न्यायाधीश एससीसी ने पुनरीक्षणकर्ता/वादी के मुकदमे को खारिज कर दिया Fkk।

2. मामले का तथ्यात्मक मैट्रिक्स यह है कि वादी/पुनरीक्षणकर्ता ने प्रतिवादी/प्रतिवादी के खिलाफ बेदखली, बकाया किराया और मेस्ने लाभ की डिक्री के लिए 2012 का एससीसी मुकदमा संख्या 03 दायर किया, जिसमें कहा गया कि वादी संपत्ति का मालिक और मकान मालिक है। नंबर 28(45/45/1) मालवीय रोड लक्ष्मण चौक, देहरादून। कुछ अन्य सह-मालिक विदेश और अन्य शहरों में रह रहे हैं, जिसके कारण वादी/संशोधक वाद संपत्ति का मकान मालिक/सह-मालिक है। यह कहा गया था कि मुकदमे की संपत्ति

का एक हिस्सा, जिसमें तीन कमरे, एक सामान्य ड्राइंग रूम, रसोई, शौचालय और बाथरूम शामिल थे, प्रतिवादी/प्रतिवादी को 2200 रुपये की दर पर 11 महीने की अवधि के लिए किराए पर दे दिया गया था। /- दिनांक 15.05.2008 के समझौते के तहत प्रति माह। प्रतिवादी/प्रतिवादी की किरायेदारी 14.04.2009 को समाप्त हो गई है लेकिन फिर भी प्रतिवादी ने वादी के अनुरोध के बावजूद वाद संपत्ति खाली नहीं की है। आगे यह भी कहा गया कि प्रतिवादी ने केवल 15.09.2008 तक का किराया चुकाया है और उसके बाद उसने कोई किराया नहीं दिया है। इस के अलावा, प्रतिवादी पर बिजली और पानी का शुल्क भी बकाया है। जब भी वादी किराया व अन्य शुल्क की मांग करता था, प्रतिवादी उसके साथ गाली-गलौज व मारपीट करता था. अत: वादी ने प्रतिवादी को दिनांक 22.04.2010 को एक कानूनी नोटिस भेजकर किराया एवं बिजली एवं पानी शुल्क की मांग की, परन्तु उक्त नोटिस प्राप्त होने के बावजूद प्रतिवादी ने न तो किराया एवं अन्य शुल्क का भुगतान किया और न ही खाली स्थान पर उसके लिए सूट परिसर कब्जा सौंपा है।. इस प्रकार, वादी बेदखली, बकाया किराया और अन्य शुल्कों की राशि 64,100/- रुपये के साथ-साथ 12% प्रति वर्ष की दर से ब्याज और 300/- प्रति दिन की दर से न्यूनतम लाभ के लिए वर्तमान मुकदमा दायर करने के लिए बाध्य है। 19.05.2010. प्रतिवादी उसके साथ दुर्व्यवहार और मारपीट करता था। अत: वादी ने प्रतिवादी को दिनांक 22.04.2010 को एक कानूनी नोटिस भेजकर किराया एवं बिजली एवं पानी शुल्क की मांग की, परन्तु उक्त नोटिस प्राप्त होने के बावजूद प्रतिवादी ने न तो किराया एवं अन्य शुल्क का भुगतान किया और न ही खाली स्थान पर कब्जा सौंपा है। इस प्रकार, वादी बेदखली, बकाया किराया और अन्य शुल्कों की राशि 64,100/- रुपये के साथ-साथ 12% प्रति वर्ष की दर से ब्याज और 300/- प्रति दिन की दर से न्यूनतम लाभ के लिए वर्तमान मुकदमा दायर करने के लिए बाध्य है। 19.05.2010. प्रतिवादी ने न तो किराया और अन्य शुल्क का भुगतान किया है, न ही वाद परिसर का खाली कब्जा उसे सौंपा है।

3. प्रतिवादी/प्रतिवादी ने मुकदमे का विरोध किया और अपना लिखित बयान दाखिल किया और वादी के कथनों का खंडन किया। उन्होंने स्वीकार किया कि शुरू में वाद की संपत्ति वादी द्वारा उन्हें किराये पर दी गई थी और किरायेदारी 15.05.2008 से 11 महीने के लिए ₹ 2200/- प्रति माह की दर से शुरू हुई थी। उन्होंने कहा कि बाद में उन्हें पता चला कि वादी के पास कोई हिस्सा नहीं है और इस संपत्ति के लगभग 7 सह-मालिक हैं, जो विदेश में रह रहे हैं। वादी गुप्त रूप से गलत मंशा से और गहरी साजिश के तहत अन्यायपूर्ण संवर्धन के लिए संपत्ति को बिना किसी अधिकार या अधिकार के बेचने की कोशिश कर रहा है। कहा गया कि यह मुकदमा कानूनी तौर पर चलने योग्य नहीं है। अधिनियम के प्रावधान1972 की संख्या 13 वाद संपत्ति पर लागू होती है। उन्होंने आगे कहा कि वादी ने निम्नलिखित नियमों और शर्तों पर दिनांक 05.07.2011 को एक किराया समझौता निष्पादित किया है: (i) कि वादी ने प्रतिवादी से सुरक्षा के रूप में 2 लाख रुपये और इस राशि पर कोई ब्याज नहीं लगेगा और इसे वादी को दो महीने के भीतर लीज अवधि की समाप्ति के बाद वापस करना होगा और किराया अवधि 4.6.2012 तक है। प्रतिवादी की ओर कोई किराया आदि देय नहीं है; (ii) किराये की दर रु. 1200/- प्रति माह निर्धारित की गई है, जिसमें गृह कर के साथ-साथ जल कर भी शामिल है; (iii) कि वादी एक अलग उप विद्युत मीटर लगाएगा और रीडिंग के अनुसार चार्ज करेगा। प्रतिवादी ने आगे कहा कि उसने किराए की राशि, मुकदमे की लागत, ब्याज और

अन्य खर्चों का भुगतान दिनांक 01.08.2012 को 20 रुपये की निविदा के माध्यम से किया है।अधिनियम संख्या 13 सन् 1972 की धारा 20(4) जनवरी 2012 से सितम्बर 2012 तक का किराया निविदा के माध्यम से जमा किया गया है।

4. पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने लिखित बयान की प्रतिकृति दाखिल की और वादी के कथनों को दोहराया। उन्होंने आगे कहा कि प्रतिवादी ने कहा है कि वादी ने धोखाधड़ी से किरायानामा निष्पादित किया है, जबकि सही तथ्य यह है कि प्रतिवादी ने उक्त किरायानामा के आधार पर निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा दायर किया है। सिविल जज (जूनियर डिवीजन) देहरादून की अदालत में वादी के खिलाफ 2008 का ओएस नंबर 471 है, जिसमें उसके पक्ष में अंतरिम निषेधाज्ञा का आदेश दिया गया है, और मुकदमा अभी भी लंबित है। वादी ने दिनांक 05.07.2011 के किराया विलेख की सामग्री और निष्पादन से इनकार किया। उन्होंने आगे कहा कि प्रतिवादी ने 05.07.2011 को जाली और मनगढ़ंत किरायानामा तैयार किया है। उन्होंने आगे दोहराया कि वह अन्य लोगों के साथ वाद संपत्ति के सह-मालिक हैं और क्योंकि अन्य सह-मालिक विदेश और अन्य शहरों में रह रहे हैं, इसलिए वह वाद संपत्ति के सह-मालिक और मकान मालिक हैं। पार्टियों के बीच मकान मालिक-किरायेदार का रिश्ता है, जिसे इस तथ्य से साबित किया जा सकता है कि जब भी किरायेदार ने वादी को किराया दिया, तो वादी ने हमेशा उसे रसीद दी, जिसे प्रतिवादी ने 2008 के ओएस नंबर 471 में निषेधाज्ञा का आदेश प्राप्त करते समय अदालत में प्रस्तुत किया था। उन्होंने आगे कहा कि प्रतिवादी ने दावा किया है कि उसने दिनांक 01.08.2012 को निविदा जमा के माध्यम से 20,000/- रुपये की राशि जमा की है, लेकिन उसने उनके द्वारा की गई जमा राशि का कोई विवरण नहीं दिया गया। उन्होंने आगे कहा कि के प्रावधान1972 का यूपी अधिनियम संख्या 13 वाद परिसर पर लागू नहीं होता है।

5. पक्षों की दलीलों पर, विद्वान न्यायाधीश एससीसी ने निम्नलिखित fcUnq तय किए: -

(i) क्या वादी और प्रतिवादी के बीच मकान मालिक-किरायेदार का रिश्ता था?

(ii) क्या वादी द्वारा भेजे गए नोटिस से प्रतिवादी की किरायेदारी समाप्त हो गई है?

(iii) क्या वादी और प्रतिवादी के बीच किरायानामा दिनांक 05.07.2011 निष्पादित किया गया था?

(iv) क्या वादी को मुकदमा की संपत्ति बेचने के बाद किराया प्राप्त करने और प्रतिवादी की किरायेदारी समाप्त करने का अधिकार है?

(v) क्या वादी मांगी गई राहत पाने का हकदार है?

6. इसके बाद दोनों पक्षों ने अपने मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किये। मौखिक साक्ष्य में, वादी हर मोहिंदर पाल सिंह ने खुद को PW1 के रूप में जांचा और नोटिस, डाक रसीद की मूल प्रति, पावती, किराया विलेख, पुलिस रिपोर्ट, एफआईआर की प्रति, किराया रसीद, 2008 के ओएस नंबर 471 में पारित आदेश दायर किया। एसएसपी को दिए गए आवेदन की प्रति, 2008 के ओएस नंबर 471 की शिकायत आदि की प्रति, प्रतिवादी की ओर से डीडब्ल्यू 1 राजेंद्र पाल सिंह, डीडब्ल्यू 2 यशपाल सिंह, डीडब्ल्यू 3

विनोद शर्मा, डीडब्ल्यू 4 मंजीत सिंह और डीडब्ल्यू 5 रंजन सिंह की जांच की गई। दस्तावेजी साक्ष्य में उन्होंने टेंडर की मूल प्रति, शपथ पत्र की प्रति, टेंडर पेपर, नोटिस दिनांक 29.08.2019 की मूल प्रति, हाउस टैक्स की रसीद, माननीय उच्च न्यायालय के आदेश की प्रमाणित प्रति, विक्रय पत्र की प्रति, अनुबंध पत्र दाखिल किया।

7. पार्टियों के विद्वान वकील को सुनने और पार्टियों के नेतृत्व में सबूतों के अवलोकन के बाद, ट्रायल कोर्ट ने fcUnq नंबर 1 पर एक निष्कर्ष दर्ज किया कि 15.05.2008 को एक किराया विलेख सूट की संपत्ति के संबंध में निष्पादित किया गया था और इसके निष्पादन के बाद, वादी और प्रतिवादी के बीच मकान मालिक-किरायेदार संबंध स्थापित हुआ। इस प्रकार वाद क्रमांक 1 का निर्णय वादी के पक्ष में हुआ। fcUnq नंबर 2 पर, ट्रायल कोर्ट ने माना कि वादी द्वारा बकाया किराया और उसकी किरायेदारी समाप्त करने की मांग करते हुए जारी किया गया नोटिस, प्रतिवादी को विधिवत तामील कराया गया था, और तदनुसार, इस मुद्दे का निर्णय भी वादी के पक्ष में किया गया। fcUnq नंबर 3 पर, ट्रायल कोर्ट ने एक निष्कर्ष दर्ज किया कि प्रतिवादी ने दलील दी है कि वादी द्वारा दिनांक 05.07.2011 को एक अन्य किराया विलेख निष्पादित किया गया था, जिससे प्रतिवादी की किरायेदारी बढ़ा दी गई थी, और प्रतिवादी द्वारा यह दावा किया गया था कि उक्त किरायानामा की मूल प्रति वादी के पास है। दिनांक 05.07.2011 के किराया विलेख के निष्पादन को साबित करने के लिए, प्रतिवादी राजेंद्र पाल सिंह (DW1) के अलावा, DW2 यशपाल सिंह और DW5 रंजन गिन्नी की भी जांच की गई, जिन्होंने बताया कि किराया विलेख दिनांक 05.07.2011 को उनके सामने निष्पादित किया गया था। प्रतिवादी ने वादी को 2.00 लाख रुपये नकद दिए थे और समझौते के अनुसार, दोनों पक्ष 1200/- रुपये प्रति माह की दर से किराए पर सहमत हुए। ट्रायल कोर्ट ने उस समझौते के गवाह को ढूंढते हुए दर्ज किया डीडब्ल्यू 2 यशपाल सिंह और डीडब्ल्यू 5 रंजन गिन्नी ने किराया विलेख के निष्पादन को साबित कर दिया है और तदनुसार माना है कि किराया विलेख दिनांक 05.07.2011 को पार्टियों के बीच निष्पादित किया गया था और प्रतिवादी के पक्ष में fcUnq संख्या 3 का फैसला किया गया था। fcUnq संख्या 4 पर, ट्रायल कोर्ट ने निष्कर्ष निकाला कि मुकदमे की संपत्ति 1542 वर्ग मीटर है। साधु सिंह के सात पुत्रों के बीच विभाजित किया गया था और उनमें से प्रत्येक को संपत्ति में 1/7वां हिस्सा मिला था और संपत्ति के सभी हिस्से बेच दिए गए थे, और यदि यह माना जाता है कि वादी उस स्थिति में सह-मालिक के रूप में रह रहा है साथ ही, यह भी ज्ञात नहीं है कि वादी का किस भाग पर कब्ज़ा है, और इस संबंध में, वादी यह साबित नहीं कर पाया है कि वह वाद की संपत्ति में सह-मालिक है और ऐसा प्रतीत होता है कि उसका इस पर कोई अधिकार नहीं है। वह संपत्ति जो प्रतिवादी की किरायेदारी के अधीन है। इस प्रकार, ट्रायल कोर्ट ने यह निष्कर्ष निकाला कि मुकदमे की संपत्ति के कुछ हिस्सों को बेच दिए जाने के बाद, वादी का मुकदमे की संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं है। मुद्दे संख्या 5 पर, ट्रायल कोर्ट ने निष्कर्ष को संपूर्ण के रूप में दर्ज किया वाद की संपत्ति बेच दी गई है, वादी का वाद की संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं है, और इस प्रकार वादी का वाद खारिज होने योग्य है। दर्ज निष्कर्षों के आधार पर, ट्रायल कोर्ट ने दिनांक 08.01.2019 के निर्णय और डिक्री द्वारा वादी के मुकदमे को खारिज कर दिया।

8. मैंने पक्षों के विद्वान वकीलों को सुना है और रिकॉर्ड पर उपलब्ध संपूर्ण सामग्री का अवलोकन किया है।

9. पुनरीक्षणवादी/वादी के विद्वान वकील यह प्रस्तुत करेंगे कि विद्वान न्यायाधीश एससीसी ने बेदखली और किराए की वसूली के मुकदमे में वाद की संपत्ति पर पुनरीक्षणवादी/वादी के स्वामित्व और स्वामित्व के प्रश्न में प्रवेश करके कानून में गलती की है। उन्होंने आगे कहा कि fcUnq संख्या 1 पर ट्रायल कोर्ट ने एक स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज किया है कि वादी और प्रतिवादी के बीच मकान मालिक-किरायेदार संबंध मौजूद है, जबकि fcunq नंबर 4 और 5 पर, ट्रायल कोर्ट द्वारा विरोधाभासी निष्कर्ष दर्ज किए गए हैं। मुकदमे की संपत्ति का कुछ हिस्सा बेच दिए जाने के बाद, वादी का मुकदमे की संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं है और मुकदमा खारिज होने योग्य है।

10. इसके विपरीत, प्रतिवादी/प्रतिवादी के विद्वान वकील न्यायाधीश एससीसी द्वारा पारित निर्णय और डिक्री का समर्थन करेंगे और प्रस्तुत करेंगे कि न्यायाधीश एससीसी द्वारा fcUnq संख्या 3, 4 और 5 पर दर्ज किए गए निष्कर्ष साक्ष्य की सराहना पर आधारित हैं। . इस प्रकार, अनिवार्य रूप से साक्ष्य की सराहना के आधार पर तथ्य की खोज होने के कारण, अधिनियम की धारा 25 के तहत पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के प्रयोग में इसमें हस्तक्षेप या परेशान नहीं किया जा सकता है। अपनी दलील को मजबूत करने के लिए, वह त्रिलोक सिंह चौहान बनाम राम लाल (मृत) और अन्य (2018) 2 एससीसी 566 के मामले में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा करेंगे और निम्नलिखित पैराग्राफ का उल्लेख करेंगे: -

"14. उच्च न्यायालय अधिनियम, 1887 की धारा 25 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर रहा था जिसका प्रावधान इस प्रकार है:

"धारा 25। लघु वाद न्यायालयों की डिक्री और आदेशों का पुनरीक्षण: - उच्च न्यायालय, स्वयं को संतुष्ट करने के उद्देश्य से कि लघु वाद न्यायालय द्वारा तय किए गए किसी भी मामले में किया गया डिक्री या आदेश कानून के अनुसार था, कॉल कर सकता है मामले के लिए और उसके संबंध में ऐसा आदेश पारित करें जो वह उचित समझे।"

15. अधिनियम, 1887 की धारा 25 का दायरा कई अवसरों पर इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आया। हरि शंकर एवं अन्य में। बनाम राव गिरधारी लाल चौधरी, एआईआर 1963 एससी 698, पैरा संख्या 9 और 10 में, इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्धारित किए:

"9. हम जिस धारा से निपट रहे हैं, वह लगभग धारा 25 के समान ही है प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम के उस अनुभाग पर कई मामलों में उच्च न्यायालयों द्वारा विचार किया गया है और विविध व्याख्याएं दी गई हैं। जिन शक्तियों को प्रदान करने की बात कही गई है, वे एक व्यापक स्पेक्ट्रम की शुरुआत करेंगी, एक छोर पर, इस दृष्टिकोण के साथ कि इसके तहत केवल कानून की पर्याप्त त्रुटियों को ठीक किया जा सकता है, और दूसरे पर, हस्तक्षेप की शक्ति से थोड़ी बेहतर शक्ति के साथ समाप्त होगी। अपील क्या देती है. उन मामलों पर चर्चा करना बेकार है जिनमें से कुछ में टिप्पणियाँ संभवतः कुछ

असामान्य तथ्यों की मजबूरी के तहत की गई थीं।बेल एंड कंपनी लिमिटेड बनाम वामन हेमराज , (1938) 40 बॉम एलआर 125: (एआईआर 1938 बॉम 223) जहां प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 25 से निपटते हुए विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने कहा:

"3... धारा 25 का उद्देश्य उच्च न्यायालय को यह देखने में सक्षम बनाना है कि न्याय में कोई गड़बड़ी नहीं हुई है, कि निर्णय कानून के अनुसार दिया गया था।

4. धारा उन मामलों की गणना नहीं करती है जिनमें न्यायालय पुनरीक्षण में हस्तक्षेप कर सकता है, जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 में है, और मैं निश्चित रूप से उन परिस्थितियों की विस्तृत परिभाषा का प्रयास करने का प्रस्ताव नहीं करता हूं जो इस तरह के हस्तक्षेप को उचित ठहरा सकती हैं; लेकिन जो उदाहरण तुरंत दिमाग में आते हैं वे ऐसे मामले हैं जिनमें आदेश देने वाले न्यायालय के पास कोई क्षेत्राधिकार नहीं था, या जिसमें न्यायालय ने उन सबूतों पर अपना निर्णय लिया है जिन्हें स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए था, या ऐसे मामले जहां असफल पक्ष को नहीं दिया गया है सुनवाई का उचित अवसर, या सबूत का बोझ गलत कंधों पर डाल दिया गया है। जहां भी न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि असफल पक्ष का कानून के अनुसार उचित मुकदमा नहीं चला है, तो कोर्ट हस्तक्षेप कर सकता है. लेकिन, मेरी राय में, न्यायालय को केवल इसलिए हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि उसे लगता है कि संभवतः मामले की सुनवाई करने वाले न्यायाधीश ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचे होंगे जिस पर उच्च न्यायालय नहीं पहुंचा होगा।"

इस अवलोकन से हमारी पूर्ण सहमति है।

10. विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने जो कहा है वह अधिनियम की धारा 35 पर लागू होता है , जिससे हम चिंतित हैं। इस दृष्टिकोण से निर्णय लेने पर, विद्वान एकल न्यायाधीश को तथ्य की खोज की योजना में हस्तक्षेप करना उचित नहीं था, और इससे भी अधिक, क्योंकि वह स्वयं एक गलत धारणा पर आगे बढ़े थे।"

16. एक और निर्णय जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है वह मुंदरी लाल बनाम में इस न्यायालय का निर्णय है। सुशीला रानी (श्रीमती) एवं अन्य, (2007) 8 एससीसी 609। इस न्यायालय ने माना कि अधिनियम, 1887 की धारा 25 के तहत क्षेत्राधिकार धारा 115 सीपीसी के तहत पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार से अधिक व्यापक है, लेकिन साक्ष्य की सराहना के आधार पर तथ्य की शुद्ध खोज हो सकती है। अधिनियम, 1887 की धारा 25 के तहत क्षेत्राधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। न्यायालय ने उन परिस्थितियों को भी समझाया जिनके तहत धारा 25 के तहत क्षेत्राधिकार के प्रयोग में निष्कर्षों में हस्तक्षेप किया जा सकता है।. ऐसे बहुत ही सीमित आधार हैं जिन पर धारा 25 के तहत अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में हस्तक्षेप किया जा सकता है; वे तब होते हैं, जब (i) निष्कर्ष विकृत हों या (ii) बिना किसी सामग्री पर आधारित हों

(iii) अस्वीकार्य साक्ष्यों पर विचार करने के बाद निष्कर्ष निकाले गए हैं या (iv) प्रासंगिक साक्ष्यों पर विचार किए बिना निष्कर्ष निकाले गए हैं।

17. वर्तमान मामला ऐसा नहीं है जहां उच्च न्यायालय ने उपरोक्त किसी भी आधार पर ट्रायल कोर्ट के निष्कर्ष को रद्द कर दिया है जहां धारा 25 के तहत पुनरीक्षण न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है। उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचते समय ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए कारणों का भी उल्लेख नहीं किया है कि किराया दर रु। 1500/- प्रति माह. इस प्रकार हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय का निर्णय टिकाऊ नहीं है।"

11. वादपत्र के कथनों के अवलोकन से पता चलता है कि वादी ने वादपत्र में विशेष रूप से अनुरोध किया है कि चूंकि वाद संपत्ति के अन्य सह-मालिक/सह-हिस्सेदार विदेश में रह रहे हैं, इसलिए वह वाद संपत्ति संख्या का सह-स्वामी/मकान मालिक है। 28(45/45/1)मालवीय रोड। इसके अलावा, उन्होंने अनुरोध किया है कि दिनांक 15.05.2008 के एक किराया विलेख के माध्यम से, सूट की संपत्ति जिसमें तीन कमरे, एक सामान्य ड्राइंग रूम, रसोई, शौचालय और बाथरूम शामिल हैं, प्रतिवादी को 11 महीने की अवधि के लिए किराए पर दे दी गई थी। रु. 2200/- प्रति माह. लिखित बयान में, प्रतिवादी ने अपने और वादी के बीच मकान मालिक-किरायेदार संबंध से इनकार नहीं किया है, और लिखित बयान के पैरा-3 में स्वीकार किया है, कि वह वाद संपत्ति के एक हिस्से में रुपये के किराए पर किरायेदार है। .2200/- प्रति माह। लेकिन, इसके बाद, अगले पैराग्राफ में, कि हस्तांतरित परिसर का किराया केवल 1200/- रुपये प्रति माह है, जिसमें पानी के साथ-साथ गृह कर आदि भी शामिल है और वादी ने दिनांक 05.07.2011 को एक किराया समझौता निष्पादित किया है।

12. यह रिकॉर्ड पर आया है कि प्रतिवादी राजिंदर पाल सिंह ने भी उसी संपत्ति के संबंध में वादी/संशोधनकर्ता के खिलाफ निषेधात्मक निषेधाज्ञा की डिक्री के लिए 2008 का ओएस नंबर 471 का मुकदमा दायर किया है, जिसमें उन्होंने स्पष्ट रूप से अनुरोध किया है कि वादी इसमें संपत्ति का मालिक और मकान मालिक है और वह 2200/- रुपये प्रति माह की दर से उसमें किरायेदार है। उक्त मुकदमे में, उन्होंने दिनांक 15.05.2008 को किराया समझौते के निष्पादन को स्वीकार किया है और यह 11 महीने की अवधि के लिए निष्पादित किया गया था और 14.04.2009 तक प्रभावी था। ऐसे तथ्यों और परिस्थितियों में, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि पक्षों के बीच मकान मालिक-किरायेदार संबंध के संबंध में कोई विवाद नहीं है, साथ ही यह तथ्य भी है कि मुकदमा परिसर प्रतिवादी को 2200/- रुपये की दर पर किराए पर दिया गया था। - प्रति महीने। हालाँकि प्रतिवादी/प्रतिवादी ने fcUnq संख्या 1 और 2 पर दर्ज निष्कर्षों को चुनौती नहीं दी है, लेकिन पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए, इस न्यायालय का कर्तव्य है कि वह fcUnq संख्या 1 पर ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों की सत्यता की जांच करे। और 2. रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री के साथ-साथ प्रतिवादी द्वारा की गई स्वीकारोक्ति को देखने के बाद, इस न्यायालय का मानना है कि ट्रायल कोर्ट ने दलीलों और सराहना के आधार पर fcUnq संख्या 1 और 2 पर निष्कर्षों को सही तरीके से दर्ज किया है। प्रमाण। इस प्रकार, fcUnq संख्या 1 और 2 पर ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किए

गए निष्कर्षों की पुष्टि की जाती है। 1 और 2. रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री के साथ-साथ प्रतिवादी द्वारा की गई स्वीकारोक्ति को देखने के बाद, इस न्यायालय का मानना है कि ट्रायल कोर्ट ने दलीलों और प्रशंसा के आधार पर मुद्दा संख्या 1 और 2 पर सही निष्कर्ष दर्ज किए हैं। साक्ष्य का. इस प्रकार, fcUnq संख्या 1 और 2 पर ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों की पुष्टि की जाती है। 1 और 2. रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री के साथ-साथ प्रतिवादी द्वारा की गई स्वीकारोक्ति को देखने के बाद, इस न्यायालय का मानना है कि ट्रायल कोर्ट ने दलीलों और प्रशंसा के आधार पर fcUnq संख्या 1 और 2 पर सही निष्कर्ष दर्ज किए हैं। साक्ष्य का. इस प्रकार fcUnq संख्या 1 और 2 पर ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों की पुष्टि की जाती है।

13. यह प्रतिवादी का स्वीकृत मामला है कि वाद संपत्ति का सह-मालिक होने के नाते वाद संपत्ति प्रतिवादी को किराया विलेख दिनांक 15.05.2008 के माध्यम से 11 महीने की अवधि के लिए किराए पर दी गई थी। हालाँकि, केवल तीन महीने की अवधि समाप्त होने के बाद, वादी ने प्रतिवादी से मुकदमा परिसर खाली करने का अनुरोध किया, प्रतिवादी ने 2008 के मूल मुकदमा संख्या 471 राजिंदर पाल सिंह बनाम हर मोहिंदर पाल सिंह के रूप में सिविल जज की अदालत में मुकदमा दायर किया। (सीनियर डिवीजन) वादी को प्रतिवादी को बेदखल करने और प्रतिवादी के शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए वादी के खिलाफ निषेधात्मक निषेधाज्ञा की डिक्री के लिए।

14. दूसरी ओर, वर्तमान मुकदमे में, प्रतिवादी ने लिखित बयान में एक नया मामला स्थापित किया कि वादी और प्रतिवादी के बीच 05.07.2011 को एक और किरायानामा निष्पादित किया गया था, जिसके तहत किराए की दर 1200/- रुपये तय की गई थी। प्रति माह गृह एवं जल कर सहित, तथा प्रतिवादी ने सुरक्षा हेतु वादी को रु. 2,00,000/- की धनराशि दी। हालाँकि, प्रतिवादी ने किरायानामा दिनांक 05.07.2011 की मूल प्रति अदालत में दाखिल नहीं की और कहा कि मूल वादी के पास है। इस दलील के समर्थन में प्रतिवादी ने डीडब्ल्यू2 यशपाल सिंह एवं डीडब्ल्यू5 रंजन सिंह से पूछताछ करायी. ट्रायल कोर्ट, DW2 यशपाल सिंह और DW5 रंजन सिंह के बयानों पर विचार करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यह माना जा सकता है कि किराया समझौता दिनांक 05.07.2011 को पार्टियों के बीच निष्पादित किया गया था।

15. यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि प्रारंभ में वाद की संपत्ति वादी द्वारा प्रतिवादी को किराया विलेख दिनांक 15.05.2008 के माध्यम से 2200/- रुपये प्रति माह की दर से 11 महीने की अवधि के लिए किराए पर दी गई थी, जो 15.05.2008 से शुरू हुई थी। 15.05.2008 और 14.04.2009 को समाप्त होना था, लेकिन प्रतिवादी के आचरण को देखते हुए वादी ने 11.9.2008 को एक पत्र/नोटिस जारी कर उसे मुकदमा परिसर खाली करने के लिए कहा, जैसा कि ओएस नंबर 471 के वादपत्र से स्पष्ट है। 2008. चूंकि केवल तीन महीने की अवधि के बाद, वादी प्रतिवादी को मुकदमे की संपत्ति से बेदखल करना चाहता था, जिसके अनुसार प्रतिवादी द्वारा 2008 का ओएस नंबर 471 दायर किया गया था, वादी के लिए एक और किराया विलेख निष्पादित करने का कोई अवसर नहीं था। दिनांक 05.07.2011. इसके अलावा, प्रतिवादी ने दिनांक

05.07.2011 के कथित किराया विलेख की मूल प्रति को कभी भी रिकॉर्ड पर नहीं लाया और केवल यह कहकर उसे उक्त दायित्व से मुक्त कर दिया कि किराया विलेख की मूल प्रति वादी के पास है। मामले में, जैसा कि प्रतिवादी द्वारा आरोप लगाया गया है, किराया विलेख दिनांक 05.07 की मूल प्रति। 2011 वादी के कब्जे में था, तो उसे द्वितीयक साक्ष्य पेश करने के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना चाहिए था, लेकिन न तो उसने इस संबंध में कोई आवेदन दिया और न ही ट्रायल कोर्ट के समक्ष कथित किरायानामा को रिकॉर्ड पर लाने का कोई प्रयास किया। ऐसी परिस्थितियों में, अनाज को भूसी से अलग करना अदालत का कर्तव्य था। लेकिन, मौजूदा मामले में, ट्रायल कोर्ट ने प्रतिवादी द्वारा स्थापित दिनांक 05.07.2011 के किराये के समझौते के झूठे सिद्धांत पर भरोसा किया है, इस कानूनी प्रस्ताव को नजरअंदाज करते हुए कि किसी दस्तावेज़ की फोटोकॉपी साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है जब तक कि प्राथमिक दस्तावेज़ का उत्पादन न किया जाए। संतोषजनक ढंग से हिसाब लगाया गया है, जिसका अर्थ है कि जब तक,

16. माननीय शीर्ष न्यायालय ने राकेश मोहिंदरा बनाम अनीता बेरी और अन्य (2016) 16 एससीसी 483 के मामले में साक्ष्य अधिनियम की धारा 63 और 65 के प्रभाव से निपटते हुए निम्नानुसार निर्णय दिया है: -

"15. द्वितीयक साक्ष्य पेश करने की पूर्व शर्त यह है कि ऐसे दस्तावेजों पर भरोसा करने वाली पार्टी सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद भी ऐसे मूल दस्तावेज पेश नहीं कर सकी, जो कि उनके नियंत्रण से परे है। पार्टी ने द्वितीयक साक्ष्य पेश करने की मांग की। साक्ष्य को प्राथमिक साक्ष्य के गैर-उत्पादन के लिए स्थापित किया जाना चाहिए। जब तक यह स्थापित न हो जाए कि मूल दस्तावेज़ खो गया है या नष्ट हो गया है या उस दस्तावेज़ के संबंध में पार्टी द्वारा जानबूझकर रोका जा रहा है, जिसका उपयोग किया जाना है, उस दस्तावेज़ के संबंध में द्वितीयक साक्ष्य स्वीकार नहीं किया जा सकता.

20. यह अच्छी तरह से स्थापित है कि यदि कोई पक्ष द्वितीयक साक्ष्य का नेतृत्व करना चाहता है, तो न्यायालय न्यायालय में प्रस्तुत दस्तावेज़ या उनकी सामग्री के संभावित मूल्य की जांच करने और द्वितीयक साक्ष्य में दस्तावेज़ की स्वीकार्यता के प्रश्न का निर्णय करने के लिए बाध्य है। साथ ही, पार्टी को द्वितीयक साक्ष्य देने का अधिकार स्थापित करने के लिए तथ्यात्मक आधार तैयार करना होगा जहां मूल दस्तावेज़ का उत्पादन नहीं किया जा सकता है। यह भी समान रूप से अच्छी तरह से स्थापित है कि न तो किसी दस्तावेज़ को साक्ष्य के रूप में स्वीकार करना ही उसका प्रमाण है और न ही किसी दस्तावेज़ को उसके प्रमाण के साथ प्रदर्शित करना है।

17. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह माना जाता है कि मुद्दा संख्या 3 पर ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष कानून की दृष्टि से दोषपूर्ण है। इस प्रकार उसे अलग रखा जाता है।

18. अब, इस न्यायालय को यह जांच करनी है कि क्या सह-मालिक/मकान मालिक किराए की बेदखली और वसूली के लिए मुकदमा चला सकता है और क्या ट्रायल कोर्ट इस निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद कि

मुकदमे की संपत्ति बेच दी गई है, वादी के मुकदमे को खारिज करना उचित है। , जबकि प्रतिवादी द्वारा अपने लिखित बयान में ऐसी कोई दलील नहीं दी गई थी।

19. इस समय, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 116 को पुन: प्रस्तुत करना उपयुक्त होगा, जो इस प्रकार है: -

116. किरायेदार की रोक; और कब्जे वाले व्यक्ति के लाइसेंसधारी का। - अचल संपत्ति का कोई भी किरायेदार, या ऐसे किरायेदार के माध्यम से दावा करने वाले व्यक्ति को, किरायेदारी की निरंतरता के दौरान, इस बात से इनकार करने की अनुमति नहीं दी जाएगी कि किरायेदारी की शुरुआत में, ऐसे किरायेदार के मकान मालिक के पास था , ऐसी अचल संपत्ति का स्वामित्व; और किसी भी व्यक्ति को, जिसके कब्जे वाले व्यक्ति के लाइसेंस से कोई अचल संपत्ति मिली हो, उसे इस बात से इनकार करने की अनुमति नहीं दी जाएगी कि उस व्यक्ति के पास उस समय ऐसे कब्जे का अधिकार था जब ऐसा लाइसेंस दिया गया था।

20. आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य बनाम डी. रघुकुल प्रसाद (मृत) के मामले में एलआर द्वारा। और अन्य (2012) 8 एससीसी 584, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 116 पर विचार करते हुए कहा कि जिस किरायेदार के पास स्वामित्वहीन परिसर का कब्जा है, उसे मकान मालिक के स्वामित्व पर सवाल उठाने से रोका जाता है, जब तक कि किरायेदार मकान मालिक को कब्जा नहीं सौंप देता है।

21. राजेंद्र तिवारी बनाम बासुदेव प्रसाद एआईआर 2002 एससी 136 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि राहत देने के लिए पक्षों के बीच मकान मालिक और किरायेदार के रिश्ते का अस्तित्व अनिवार्य है। परिसर के पक्षकारों के स्वामित्व का प्रश्न प्रासंगिक नहीं है और न्यायालय के दायरे से परे है।

22. शमीम अख्तर बनाम इकबाल अहमद (2000) 8 एससीसी 123 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार व्यवस्था दी है: -

"11. उपरोक्त पैराग्राफ में बताए गए मामले के तथ्यों के सारांश से यह स्पष्ट है कि मकान मालकिन द्वारा किरायेदार को बेदखल करने के लिए शुरू की गई कार्यवाही लगभग दो दशकों की अवधि से अदालतों में लंबित है। निचली अदालतों द्वारा पारित आदेशों और उच्च न्यायालय के फैसले से हमने पाया कि लघु वाद न्यायालय में मुकदमे की स्थिरता के खिलाफ आपत्ति पर विचार करने के लिए समय समर्पित किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि मूल तथ्य स्मोक स्क्रीन में खो गया है] क्षेत्राधिकार के मुद्दे पर बनाया गया मामला यह है कि याचिका धारा 20 के तहत दायर की गई थीअधिनियम के अनुसार, वादी द्वारा प्रतिवादी के विरुद्ध घर की मकान मालकिन होने का दावा किया गया, जो निर्विवाद रूप से उक्त परिसर के कब्जे में किरायेदार था। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, प्रतिवादी नंबर 1 ने पूरी तरह से इनकार कर दिया है कि वादी-अपीलकर्ता के पास मुकदमे की संपत्ति में कोई स्वामित्व या हित था और इस बात से

भी इनकार किया है कि उनके बीच मकान मालिक और किरायेदार का कोई रिश्ता था। उन्होंने इस मामले की भी पैरवी की थी कि एक मो. इब्राहिम उसका मकान मालिक था और वह उसे सूट हाउस का किराया देता था। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, निर्धारित करने का प्रश्न यह था कि क्या वादी का मामला यह था कि वह प्रतिवादी की मकान मालकिन थी और वह प्रतिवादी द्वारा उसके स्वामित्व से इनकार करने और उसके द्वारा किराए का भुगतान न करने के आधार पर अपने पक्ष में बेदखली की डिक्री की हकदार थी। . विद्वान एकल न्यायाधीश ने चुनौती के तहत फैसले में कहा है और हमारे विचार से यह सही है कि डिक्री की मांग करने वाले वादी के मामले का फैसला करते समय मुकदमे की संपत्ति के स्वामित्व का सवाल संयोगवश उठाया जा सकता है। बेदखली का. संपत्ति के स्वामित्व का प्रश्न अधिनियम के तहत शुरू की गई कार्यवाही में अंतिम रूप से निर्धारित नहीं किया जाना था। यदि इस स्थिति को ध्यान में रखा जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है कि लघु वाद न्यायालय में मुकदमे की स्थिरता का मुद्दा अपनी प्रासंगिकता खो देता है और परिणामस्वरूप, निष्क्रान्त संपत्ति अधिनियम , 1950 और शत्रु संपत्ति अधिनियम के प्रावधानों के आधार पर उठाई गई आपत्तियाँ, 1968 जो बाद में प्रतिवादी द्वारा पेश किए गए थे, कार्यवाही के निपटान के उद्देश्य से अपना महत्व खो देते हैं। हमारा ध्यान रिकॉर्ड पर किसी भी सामग्री की ओर आकर्षित नहीं किया गया है जो यह दर्शाता हो कि उपरोक्त किसी भी अधिनियम के तहत किसी भी विधिवत गठित कार्यवाही में सक्षम प्राधिकारी ने वाद संपत्ति को या तो निष्क्रांत संपत्ति या शत्रु संपत्ति घोषित किया है। निचली अदालतों द्वारा पारित आदेशों में चर्चा से यह भी प्रतीत होता है कि किरायेदार द्वारा जिला मजिस्ट्रेट, वाराणसी-सह-शत्रु संपत्ति के संरक्षक के समक्ष कार्यवाही शुरू करने का प्रयास किया गया था जो अंततः सफल नहीं हुआ। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि इन सवालों को किरायेदार द्वारा कार्यवाही में देरी से पेश किया गया था ताकि कार्यवाही को लम्बा खींचा जा सके ताकि वह यथासंभव लंबे समय तक परिसर पर कब्जा जारी रख सके। कुछ हद तक उनका प्रयास सफल हुआ प्रतीत होता है जिसके परिणामस्वरूप प्रारंभिक मुद्दे के रूप में क्षेत्राधिकार के प्रश्न के निपटान के लिए या मामले की योग्यता निर्धारित करने के लिए कार्यवाही को ट्रायल कोर्ट में बार-बार भेजा गया। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश मूल प्रश्न पर पहुंचने के लिए मामले का ठीक से विश्लेषण नहीं कर सके, जो कि, जैसा कि पहले कहा गया था, यह था कि क्या वादी किरायेदार के खिलाफ बेदखली के डिक्री का हकदार था।

12. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के तहत ट्रायल कोर्ट ने लघु वाद न्यायालय अधिनियम की धारा 23 के तहत वादी-अपीलकर्ता को वाद वापस करने में स्पष्ट रूप से गलती की। धारा 23(1) में यह प्रावधान है कि जब किसी वादी का अधिकार और उसके द्वारा y?kq okn की अदालत में दावा की गई राहत अचल संपत्ति या अन्य शीर्षक के स्वामित्व के सबूत या खंडन पर निर्भर करती है जिसे ऐसा न्यायालय अंततः निर्धारित नहीं कर सकता है, तो न्यायालय कार्यवाही के किसी भी चरण में वादपत्र को स्वामित्व निर्धारित करने के क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय को प्रस्तुत करने के लिए वापस कर सकता है। उपधारा (1) के तहत न्यायालय को प्रदत्त शक्ति विवेकाधीन है। इसका प्रयोग केवल तभी किया जाना चाहिए जब लघु वाद न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में वादी द्वारा दावा की गई राहत अचल संपत्ति के स्वामित्व के सबूत या

खंडन पर निर्भर करती है और मांगी गई राहत प्रश्न के निर्धारण के बिना नहीं दी जा सकती है। वर्तमान मामले में, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, वादी ने धारा 20(2)(एफ) के तहत बेदखली के लिए याचिका दायर की।आरोप लगाया कि वह घर की मकान मालकिन थी और उसने प्रतिवादी नंबर 1 को परिसर के किरायेदार के रूप में शामिल किया था। सवाल यह था कि उस मामले को स्वीकार किया जाए या नहीं। वास्तव में, ट्रायल कोर्ट ने, प्रथम दृष्टया, अन्य बातों के साथ-साथ यह कहते हुए वादी के मामले को स्वीकार कर लिया था कि उसे संपत्ति श्रीमती से पंजीकृत उपहार विलेख द्वारा मिली थी। खैरुन्निसा बीबी को यह संपत्ति उनकी मां फाकिया बीबी ने उपहार में दी थी, जो निर्विवाद रूप से संपत्ति की मूल मालिक थीं। मुकदमे के घर पर वादी के स्वामित्व के प्रश्न पर कार्यवाही में लघु वाद न्यायालय द्वारा एक आकस्मिक प्रश्न के रूप में विचार किया जा सकता है और शीर्षक का अंतिम निर्धारण सक्षम न्यायालय के निर्णय के लिए छोड़ा जा सकता है। ऐसी परिस्थितियों में, यह नहीं कहा जा सकता है कि वादी द्वारा दावा की गई राहत देने के उद्देश्य से लघु वाद न्यायालय के लिए संपत्ति का स्वामित्व अंतिम रूप से निर्धारित करना नितांत आवश्यक था। किरायेदार-प्रतिवादी केवल अपने और वादी के बीच मकान मालिक और किरायेदार के रिश्ते को नकार कर किराया नियंत्रण अधिनियम के तहत बेदखली की कार्यवाही से नहीं बच सकता।

23. डॉ. रणबीर सिंह बनाम अशर्फी लाल , (1995) 6 एससीसी 580 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दिया है:-

"9. यह बताया जा सकता है कि यह अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि संपत्ति के स्वामित्व का सवाल नहीं है बेदखली मुक़दमे के निर्णय के लिए जर्मन। ऐसे मामले में जहां एक वादी मकान मालिक और किरायेदार के रिश्ते के आधार पर अपने किरायेदार को बेदखल करने के लिए मुकदमा दायर करता है, मुकदमे का दायरा बहुत सीमित है जिसमें स्वामित्व का प्रश्न नहीं उठाया जा सकता क्योंकि वादी का मुकदमा होगा भले ही वह अपना स्वामित्व साबित करने में सफल हो जाए, लेकिन किरायेदारी के अनुबंध की गोपनीयता स्थापित करने में विफल हो जाए, तो उसे बर्खास्त कर दिया जाएगा। ऐसे रिश्ते के आधार पर बेदखली के मुकदमे में न्यायालय को केवल यह तय करना है कि प्रतिवादी वादी का किरायेदार है या नहीं, हालांकि स्वामित्व का प्रश्न यदि विवादित है, तो संयोगवश उस पर विचार किया जा सकता है।एलआईसी बनाम इंडिया ऑटोमोबाइल्स एंड कंपनी (एससीसी पीपी. 300-02, पैरा) में

21) इस न्यायालय के पास इसी तरह के विवाद से निपटने का अवसर था। उक्त निर्णय में इस न्यायालय ने कहा कि मकान मालिक और किरायेदार के बीच बेदखली के मुकदमे में, न्यायालय केवल संपार्श्विक मुद्दे पर प्रथम दृष्टया निर्णय लेगा कि आवेदक मकान मालिक था या नहीं। यदि न्यायालय को यह पता चलता है कि दोनों पक्षों के बीच मकान मालिक और किरायेदार का रिश्ता मौजूद है, तो उसे कानून के अनुसार डिक्री पारित करनी होगी। आगे यह देखा गया है कि न्यायालय को केवल यह संतुष्ट करना है कि बेदखली की मांग करने वाला व्यक्ति एक मकान मालिक है, जिसके पास प्रश्नxr संपत्ति का किराया प्राप्त करने का प्रथम दृष्टया अधिकार है।

24. चूंकि यह पार्टियों का स्वीकृत मामला है कि संपत्ति प्रतिवादी को 15.05.2008 के किराये के विलेख के माध्यम से किराए पर दी गई थी, इस प्रकार, साक्ष्य अधिनियम की धारा 116 के प्रावधानों के मद्देनजर, प्रतिवादी/प्रतिवादी को इनकार करने से रोक दिया गया है मुकदमे की संपत्ति पर वादी/संशोधनकर्ता का शीर्षक। न केवल प्रतिवादी को स्वामित्व से इनकार करने से रोका गया है, बल्कि एससीसी अदालत पर भी विचार करने का कर्तव्य है कि बेदखली और किराए की वसूली के लिए एक सरल मुकदमे में, शीर्षक और स्वामित्व के प्रश्न का कोई महत्व नहीं है। लेकिन, मौजूदा मामले में, ट्रायल कोर्ट ने न केवल स्वामित्व के मुद्दे पर गौर किया है, बल्कि विकृत निष्कर्ष भी दर्ज किए हैं।

25. रिकॉर्ड के अवलोकन से यह भी पता चलेगा कि प्रतिवादी द्वारा लिखित बयान में कोई दलील नहीं दी गई है कि मुकदमे की संपत्ति पंजीकृत बिक्री कार्यों के माध्यम से बेची गई है, यह केवल दावा किया गया था कि वादी सह-मालिक और मकान मालिक है संपत्ति के अनुरूप. हालाँकि, बाद में, प्रतिवादी ने सबूत पेश किए और यह दिखाने के लिए बिक्री विलेख दायर किया कि संपत्ति बेच दी गई है। लिखित बयान में दलील के अभाव में, सबसे पहले मुकदमे में प्रतिवादी को साक्ष्य पेश करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए थी और दूसरे, अस्वीकार्य साक्ष्य पर विचार नहीं किया जाना चाहिए था। कानून में यह स्थापित स्थिति है कि दलीलों के अभाव में, पार्टियों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य, यदि कोई हो, पर विचार नहीं किया जा सकता है।

26. माननीय सर्वोच्च न्यायालय एल के मामले में।
पोन्नयाल बनाम. करुप्पन्नन (मृत) तृ. एलआर

सेनगोडा गौंडर और अन्य, (2019) 11 एससीसी 800 जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार व्यवस्था दी है:

"11. हमने अपीलकर्ता द्वारा व्यक्तिगत रूप से दायर लिखित प्रस्तुतियों का अध्ययन किया है। अपीलकर्ता ने 6 तारीख के विभाजन विलेख पर भरोसा किया है दिसंबर, 1937 और निपटान विलेख दिनांक 6 अगस्त 1942। अपीलकर्ता के अनुसार, 6 दिसंबर, 1937 को विभाजन विलेख उनके दादा स्वर्गीय श्री अप्पावु गौंडर और उनके दो पुत्रों स्वर्गीय श्री करुणाप्पनन गौंडर (प्रतिवादी नंबर 1) के बीच दर्ज किया गया था।) और स्वर्गीय श्री अथप्पा गौंडर। 6 अगस्त 1942 को उनके पिता अथप्पा गौंडर द्वारा उनके दादा अप्पावु गौंडर के पक्ष में निष्पादित निपटान विलेख ने अथप्पा गौंडर की अपनी भूमि पर खेती करने में असमर्थता दर्शाई। उक्त निपटान विलेख दिनांक 6.8.1942 के अनुसार, संपत्ति अथप्पा गौंडर के कानूनी उत्तराधिकारियों को सौंपी जानी चाहिए। चूँकि उक्त दो दस्तावेज़ न तो मुकदमे की दलीलों का हिस्सा थे और न ही उक्त दस्तावेज़ों के संबंध में कोई मुद्दा बनाया गया था, हमें डर है कि हम उक्त दस्तावेजों से संबंधित मुद्दों पर निर्णय नहीं दे सकते। सिविल मुकदमों का निर्णय दलीलों और तय किए गए मुद्दों के आधार पर किया जाता है और मुकदमे के पक्षों को दलीलों से आगे बढ़ने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।"

27. बोंदर सिंह और अन्य बनाम निहाल सिंह और अन्य की रिपोर्ट (2003) 4 सुप्रीम कोर्ट केस 161 में, इसे इस प्रकार माना गया है:

"6. ऐसा प्रतीत होता है कि कानूनी तरीकों से मुकदमे की भूमि पर कब्ज़ा प्राप्त करने में विफल रहने पर, प्रतिवादियों ने वादी को जबरन बेदखल करने की कोशिश की, जिसके कारण वर्तमान मुकदमा 15.4.1972 को दायर किया गया। मुकदमे पर कब्ज़ा लेने के संबंध में प्रतिवादियों का दावा 1957-58 में वादी पक्ष से ली गई भूमि झूठी पाई गई, इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रतिवादी कभी भी मुकदमे की भूमि पर कब्ज़ा नहीं कर पाए। इन तथ्यों से एक और महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह निकलता है कि प्रतिवादी कम से कम 1956 में जब उन्होंने नोटिस एक्ज़िबिट पी.6 जारी किया तब से उन्होंने मुकदमे की भूमि पर अपने स्वामित्व का दावा करना शुरू कर दिया, जबकि वादी मुकदमे की भूमि पर अपने स्वामित्व से इनकार कर रहे थे और उस पर अपना स्वयं का स्वामित्व स्थापित कर रहे थे। इससे वादीगण द्वारा लगाई गई प्रतिकूल कब्जे की दलील को समर्थन मिलता है। रिकॉर्ड पर इस स्पष्ट और ठोस सबूत से यह देखा जाएगा कि वादी 1931 से मुकदमे की भूमि पर निरंतर और निर्बाध कब्जे में थे और वे प्रतिवादियों के खिलाफ शत्रुतापूर्ण शीर्षक स्थापित कर रहे थे। प्रतिवादी 1956 से भूमि पर अपना मालिकाना हक जता रहे थे। हालाँकि वे मुकदमे की भूमि पर कब्ज़ा पाने में विफल रहे थे।

7. जहां तक उप किरायेदारी (शिकमी) की दलील के संबंध में प्रतिवादियों की ओर से उनके विद्वान वकील द्वारा बहस की गई है, तो पहले हम यह ध्यान दे सकते हैं कि इस दलील को कभी भी लिखित बयान में उस तरह से नहीं लिया गया था जिस तरह से अब पेश किया गया है। लिखित बयान पूरी तरह से अस्पष्ट है और इस पहलू पर भौतिक विवरण का अभाव है। कुछ कथित राजस्व प्रविष्टियों को छोड़कर इस याचिका का समर्थन करने वाला कोई भी तत्व नहीं है। यह स्थापित कानून है कि याचिका के अभाव में उससे संबंधित किसी भी सबूत पर गौर नहीं किया जा सकता है। इसलिए, उप किरायेदारी (शिकमी) के संबंध में स्पष्ट दलील के अभाव में प्रतिवादियों को उप किरायेदारी (शिकमी) का मामला बनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। यदि प्रतिवादियों ने ऐसी कोई दलील दी होती तो इसे मुकदमे में एक मुद्दे के रूप में जगह मिलती। हमने मुकदमे में तय किए गए मुद्दों का अध्ययन किया है। इस मुद्दे पर कोई मुद्दा नहीं है।"

28. इस प्रकार, कानून के उपरोक्त अच्छी तरह से प्रतिपादित प्रस्ताव को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट है कि ट्रायल कोर्ट ने पार्टियों द्वारा इस संबंध में कोई दलील दिए बिना, अप्रासंगिक बिंदु संख्या 4 को तैयार करने में न केवल अवैधता की है, बल्कि अस्वीकार्य साक्ष्यों की सराहना करते हुए उस पर विकृत निष्कर्ष दर्ज करने में भी गलती की। इसलिए, fcUnq संख्या 4 पर ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों को रद्द किया जाता है।

29. अब, राहत के संबंध में, fcUnq संख्या 5 पर ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों के संबंध में, आक्षेपित निर्णय और डिक्री के अवलोकन से पता चलेगा कि ट्रायल कोर्ट ने निष्कर्ष के आधार पर fcUnq संख्या 4 पर निष्कर्ष निकाला है कि इसके बाद वाद की संपत्ति बेच दी गई है, वादी का वाद की संपत्ति पर

कोई अधिकार नहीं है, उसने वादी को राहत देने से इनकार कर दिया है और वाद को खारिज कर दिया है। जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पिछले पैराग्राफों में माना गया है कि पार्टियों के बीच मकान मालिक-किरायेदार संबंध मौजूद है और मुकदमे की संपत्ति पर वादी के शीर्षक और स्वामित्व का मुद्दा अप्रासंगिक है और इस संबंध में ट्रायल कोर्ट द्वारा विकृत निष्कर्ष दर्ज किए गए हैं। , इस न्यायालय को यह देखना होगा कि क्या प्रतिवादी ने किराए के भुगतान में चूक की है। फिर, मैं मूल सूट नंबर का संदर्भ दूंगा। 2008 का 471 प्रतिवादी/प्रतिवादी द्वारा दायर किया गया था, जिसमें उनके द्वारा एक विशिष्ट दलील दी गई थी कि उनके द्वारा देय किराया @ 2200/- प्रति माह था। दिनांक 01.11.2013 के फैसले और डिक्री द्वारा, उक्त मुकदमे में संशोधनकर्ता/वादी के खिलाफ निषेधात्मक निषेधाज्ञा से राहत देने का आदेश दिया गया था। दूसरी ओर, तत्काल मुकदमे में, वादी ने आदेश 15 नियम 5 सीपीसी के तहत उसके द्वारा दिए गए आवेदन को नीचे की अदालत द्वारा प्रतिवादी की रक्षा को खत्म करने की मांग को खारिज कर दिया, इससे पहले सिविल रिवीजन नंबर 31 ओ 2017 को प्राथमिकता दी। अदालत। इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने दिनांक 21.12.2017 के फैसले के तहत प्रतिवादी/किरायेदार को निर्देश जारी किया 2013, उक्त मुकदमे में संशोधनवादी/वादी के खिलाफ निषेधात्मक निषेधाज्ञा से राहत के लिए फैसला सुनाया गया था। दूसरी ओर, तत्काल मुकदमे में, वादी ने आदेश 15 नियम 5 सीपीसी के तहत उसके द्वारा दिए गए आवेदन को नीचे की अदालत द्वारा प्रतिवादी की रक्षा को खत्म करने की मांग को खारिज कर दिया, इससे पहले सिविल रिवीजन नंबर 31 ओ 2017 को प्राथमिकता दी। इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने दिनांक 21.12.2017 के फैसले के तहत प्रतिवादी/किरायेदार को निर्देश जारी किया 2013, उक्त मुकदमे में संशोधनवादी/वादी के खिलाफ निषेधात्मक निषेधाज्ञा से राहत के लिए फैसला सुनाया गया था। दूसरी ओर, तत्काल मुकदमे में, वादी ने आदेश 15 नियम 5 सीपीसी के तहत उसके द्वारा दिए गए आवेदन को नीचे की अदालत द्वारा प्रतिवादी की रक्षा को खत्म करने की मांग को खारिज कर दिया, इससे पहले सिविल रिवीजन नंबर 31 ओ 2017 को प्राथमिकता दी। अदालत। इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने दिनांक 21.12.2017 के फैसले के तहत प्रतिवादी/किरायेदार को निर्देश जारी किया जैसा कि उनके द्वारा स्वीकार किया गया है, किराया राशि रु.2200/- प्रति माह जमा करने पर निम्नलिखित कारण दर्ज किया गया है:-

"5. जाहिरा तौर पर, किराए का यह सिद्धांत दिनांक 05.07.2011 के किराया समझौते के आधार पर 1200/- रुपये प्रति माह निर्धारित किया गया है, जैसा कि किरायेदार ने दावा किया है, इस कारण से विश्वास नहीं होता है कि उक्त समझौते का तथ्य उनके बीच निष्पादित आदेश 6 नियम 17 को लागू करने के आधार पर 2008 के सूट नंबर 471 " राजेंद्र पाल सिंह बनाम हर मोहिंदर पाल सिंह " की दलील के हिस्से के रूप में नहीं बनाया गया था, जिससे दलीलों में संशोधन किया गया, इसलिए किराए का सिद्धांत दिनांक 05.07.2011 के समझौते को सबूतों से परे नहीं पढ़ा जा सकता, क्योंकि कोई भी सबूत दलीलों से परे नहीं पढ़ा जा सकता।"

30. चूंकि अदालत के आदेश दिनांक 21.12.2017 के बावजूद प्रतिवादी/किरायेदार द्वारा किराया का भुगतान नहीं किया गया था, पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने फिर से ट्रायल कोर्ट के समक्ष आदेश XV नियम 5

सीपीसी के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसे हालांकि निचली अदालत ने खारिज कर दिया था। जहां-पुनरीक्षणकर्ता/वादी के खिलाफ फिर से 2018 के सीएलआर नंबर 68 के तहत एक पुनरीक्षण को प्राथमिकता दी गई, जिसे एससीसी कोर्ट को दिन-प्रतिदिन के आधार पर मुकदमे की सुनवाई करने और इसे शीघ्रता से समाप्त करने के निर्देश के साथ निपटाया गया था।

31. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि किरायेदार ने न केवल वादपत्र में उल्लिखित अवधि के लिए किराए के भुगतान में चूक की है, बल्कि यह किरायेदार द्वारा किराए का भुगतान न करने के बावजूद लगातार चूक का मामला है। किरायेदारी की समाप्ति.

32. जहां तक प्रांतीय लघु वाद न्यायालय अधिनियम , 1887 की धारा 25 के तहत पुनरीक्षण न्यायालय के क्षेत्राधिकार का संबंध है, प्रतिवादी/प्रतिवादी के लिए विद्वान वकील द्वारा उद्धृत त्रिलोक सिंह चौहान (सुप्रा) में निर्णय से कोई मदद नहीं मिलती है। प्रतिवादी, बल्कि यह संशोधनवादी/वादी के मामले को मजबूत करता है। इस फैसले के पैराग्राफ 16 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मुंदरी लाल बनाम सुशीला रानी में अपने पहले के फैसले का जिक्र करते हुए कहा है कि हालांकि साक्ष्य की सराहना के आधार पर तथ्य की शुद्ध खोज में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है, लेकिन अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। धारा 25 के तहत 1887 अधिनियम के अनुसार, लेकिन कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिनके तहत ऐसे क्षेत्राधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप हो सकता है, जो हैं (i) निष्कर्ष विकृत हैं या (ii) बिना किसी सामग्री पर आधारित हैं या (iii) विचार करने पर निष्कर्ष निकाले गए हैं अस्वीकार्य साक्ष्यों पर विचार किया जाए या (iv) प्रासंगिक साक्ष्यों पर विचार किए बिना निष्कर्ष निकाले गए हों।

33. मौजूदा मामले में, जैसा कि ऊपर देखा गया है, एससीसी अदालत ने अस्वीकार्य साक्ष्यों पर विचार करने के बाद निष्कर्ष निकाला है। इस प्रकार, वर्तमान मामला तीसरी श्रेणी में आता है जिसके तहत इस न्यायालय द्वारा निष्कर्षों में हस्तक्षेप किया जा सकता है।

34. इसलिए, ऊपर दर्ज कारणों को ध्यान में रखते हुए, तत्काल नागरिक पुनरीक्षण की अनुमति दी जाती है। न्यायाधीश, एससीसी/प्रथम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, देहरादून द्वारा पारित दिनांक 08.01.2019 के आक्षेपित निर्णय और डिक्री को रद्द किया जाता है। बेदखली, बकाया किराया और मेस्ने लाभ के लिए संशोधनवादी/वादी के मुकदमे का फैसला सुनाया जाता है। प्रतिवादी/प्रतिवादी को देय तारीख से लेकर वाद परिसर का शांतिपूर्ण और खाली कब्जा सौंपे जाने की तारीख तक प्रति माह 2200/- रुपये की दर से किराया और साथ ही उसी दर पर मेस्ने लाभ/क्षति का भुगतान करना होगा। तदनुसार एक डिक्री तैयार की जाए।

35. निचली अदालत का रिकॉर्ड वापस भेजा जाए.

(लोकपाल सिंह, जे.) 25.01.2021 रजनी